Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parametres of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:7(3), July, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

उत्तराखण्ड में जनजातीय समुदायों द्वारा जल, जंगल और जमीन के पारंपरिक प्रबंधन प्रथाओं का सतत विकास पर प्रभाव

डॉ. रजनीकान्त कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं विभागीय परीक्षा प्रभारी
वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रबंधन संकाय
आम्रपाली विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

सारांश

जनजातीय समुदाय मूल रूप से जंगलों या उनके निकटस्थ क्षेत्रों में निवास करती है। जल, जंगल और जमीन इनकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन है। उत्तराखण्ड जो हिमालय की गोद में बसा एक प्रमुख राज्य है, में मुख्य रूप से पांच जनजातियां निवास करती हैं, जो भोटिया, जौनसारी, थारू, बुक्सा और राजी हैं। इन समुदायों की आजीविका का मुख्य स्रोत खेती एवं वनोत्पाद रहा है, जिस कारण ये पीढ़ियों से पर्यावरण के साथ सहजीवी संबंध बनाए रखा है। उनकी पारंपरिक प्रथाएं अक्सर पारिस्थितिकी संतुलन और संसाधन संरक्षण पर जोर देती है। क्योंकि ऐतिहासिक रूप से ये समुदाय अपनी आजीविका के लिए सीधे प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहे हैं, इसलिए समय के साथ इस समुदाय में संसाधन के विवेकपूर्ण उपयोग और संरक्षण के लिए अद्वितीय ज्ञान प्रणालियों का विकास हुआ है। ऐतिहासिक साहित्यिक स्रोतों एवं शोध कार्यों के अवलोकन से स्पष्ट है कि ये जनजातियां पीढ़ी दर पीढ़ी जल प्रबंधन हेतु जलस्रोतों, नहरों एवं तालाबों का निर्माण तथा उसकी साफ–सफाई पर ध्यान देते आए हैं जिसके कारण न केवल जमीन के अंदर जल का स्तर स्थिर रहता था बल्कि खेती एवं अन्य कार्य हेतु पर्याप्त जल की उपलब्धता भी रहती थी। वन संरक्षण हेतु विभिन्न वृक्षों को आस्था के साथ जोड़ना तथा योजनानुरूप उनका उपयोग करना उनकी प्रबंधन कौशल और दूरदर्शी सोच का ही परिचायक था। क्योंकि उत्तराखण्ड एक पर्वतीय प्रदेश है इसलिए यहां की अधिकांश भूमि पर्वतीय है। पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने वाले जनजातीय समुदाय इन भूमि पर खेती करने के लिए सीढ़ीनुमा खेत तैयार कर उसमें खेती करते थे। अपने आजीविका के लिए अपनायी जाने वाली ये पारंपरिक पद्धतियां जनजातीय समाज की पारंपरिक धरोहर है।

वर्तमान में सरकारी नीतियां, बाजार की शक्तियां, और बाहरी हस्तक्षेप जनजातीय समुदाय की पारंपरिक धरोहर को कमजोर कर रहे हैं। वनों की कटाई, अवैध खनन, और शहरीकरण के दबाव इन नाजुक प्रणालियों के लिए गंभीर चुनौतियाँ पैदा करते हैं। इसलिए, सतत विकास सुनिश्चित करने के लिए इन पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों की प्रासंगिकता अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। इनकी इसी प्रासंगिकता के कारण प्रस्तुत शोध पत्र हेतु उत्तराखण्ड में जनजातीय समुदायों द्वारा जल, जंगल और जमीन के पारंपरिक प्रबंधन प्रथाओं का सतत विकास पर प्रभाव शीर्षक का चयन किया गया है। इस शोध पत्र की पूर्ति हेतु द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया जाएगा। जिसमें विभिन्न शोध पत्र, पत्रिकाएं, पुस्तके, इंटरनेट, समाचार पत्र आदि का प्रयोग किया जाएगा।

शब्द कुंजी : आजीविका, प्राकृतिक संसाधन, प्रबंधन, धरोहर, पर्वतीय क्षेत्र।

परिचय (Introduction)

उत्तराखण्ड भारत का एक पर्वतीय राज्य है, जो उत्तर में मध्य हिमालय की गोद में बसा है। यहाँ की जनसंख्या का एक हिस्सा जनजातीय समुदायों से आता है जो सदियों से जल, जंगल और जमीन के संरक्षण व प्रबंधन में सक्रिय रहे हैं। इन समुदायों ने प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व की संस्कृति को अपनाया है, जिसमें पारंपरिक ज्ञान और जीवनशैली से पर्यावरणीय संतुलन बना रहता है।

उत्तराखण्ड में प्रमुख पांच जनजातियां – भोटिया, जौनसारी, थारू, बुक्सा और राजी निवास करती है, जो प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की दृष्टि से विशेष महत्व रखती हैं। इनमें से बोक्सा व राजी जनजाति को आदिम जनजाति का दर्जा प्राप्त है, जबकि शेष थारू, भोटिया व जौनसारी जनजातियाँ अनुसूचित जनजातियों में सम्मिलित हैं। इनकी परंपरागत कृषि पद्धतियां, जल प्रबंधन की स्थानीय तकनीकें और वन संरक्षण की रीति–नीतियां सतत विकास के लिए अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। हालांकि, आधुनिक विकास, शहरीकरण, और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों ने इन पारंपरिक प्रणालियों और जनजातीय आजीविका पर गंभीर चुनौतियाँ पेश की हैं। भूमि अधिग्रहण, प्रशासनिक उदासीनता, और बदलती वन नीतियों ने उनके पारंपरिक अधिकारों और ज्ञान को कमजोर किया है, जबकि अनियमित वर्षा, वनाग्नि, और ग्लेशियरों के पिघलने जैसी जलवायु परिवर्तन की घटनाओं ने उनकी खाद्य और जल सुरक्षा को प्रभावित किया है। यह इस बात पर बल देती है कि सतत विकास के लिए जनजातीय समुदायों के पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण, संरक्षण और आधुनिक संरक्षण रणनीतियों में एकीकरण अत्यंत आवश्यक है। यह केवल पर्यावरणीय लाभ के लिए ही नहीं, बल्कि उनकी सांस्कृतिक पहचान और आजीविका को सुरक्षित रखने के लिए भी महत्वपूर्ण है। भविष्य की नीतियों को जनजातीय समुदायों को निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदार बनाना चाहिए और उनके पारंपरिक अधिकारों का सम्मान करना चाहिए, ताकि एक समावेशी और टिकाऊ विकास सुनिश्चित किया जा सके।

समाज के लिए प्रासंगिकता (Relevance for Society)

आज जब जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाएं और संसाधनों का अत्यधिक दोहन वैश्विक चिंता का विषय बन चुका है, तब उत्तराखण्ड के जनजातीय समुदायों की पारंपरिक ज्ञान प्रणालियाँ एक वैकल्पिक और प्रभावी समाधान प्रस्तुत करती हैं। ये समुदाय बिना किसी वैज्ञानिक उपकरण या आधुनिक तकनीक के, केवल अनुभव और पीढ़ियों से चली आ रही जानकारी के आधार पर स्थायी संसाधन उपयोग को संभव बनाते हैं।

उत्तराखण्ड, अपनी अद्वितीय भौगोलिक स्थिति और समृद्ध जैव विविधता के साथ, विभिन्न जनजातीय समुदायों का घर है, जिनकी जीवनशैली और सांस्कृतिक परंपराएँ प्राकृतिक संसाधनों के साथ गहराई से जुड़ी हुई हैं। इन समुदायों ने पीढ़ियों से विकसित ज्ञान प्रणालियों के माध्यम से अपने परिवेश के साथ एक सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाए रखा है, जो आधुनिक दुनिया के लिए महत्वपूर्ण सबक प्रदान करता है।

इस अध्ययन का महत्व कई आयामों से देखा जा सकता है। सबसे पहले, यह पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों की पर्यावरणीय स्थिरता में भूमिका को उजागर करता है। जनजातीय समुदाय अक्सर ऐसे प्रबंधन मॉडल अपनाते हैं जो संसाधनों के अत्यधिक दोहन से बचते हैं और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखते हैं।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parametres of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:7(3), July, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

दूसरा, यह आधुनिक विकास और जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में इन प्रथाओं के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों को समझने में मदद करता है। तेजी से बदलते परिवेश में, इन समुदायों को अपनी पारंपरिक जीवनशैली और आजीविका को बनाए रखने के लिए नए दबावों का सामना करना पड़ रहा है।

इनकी प्रथाएं न केवल पारिस्थितिकीय दृष्टि से लाभकारी हैं, बल्कि सामाजिक समरसता, सामुदायिक सहभागिता, और जीविका के वैकल्पिक साधनों को भी बढ़ावा देती हैं। इस प्रकार यह शोध सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय दृष्टिकोण से अत्यंत प्रासंगिक है। यह उत्तराखण्ड के प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में जनजातीय समुदायों के अमूल्य योगदान को मान्यता देने और उनके अधिकारों को सुरक्षित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

साहित्य समीक्षण (Review of Literature)

1. Rawat, A. S., 2022 द्वारा लिखित "Forest Management in Kumaon Himalaya" में कुमाऊँ क्षेत्र के वनों के परंपरागत संरक्षण की विस्तृत चर्चा की गई है।
2. Negi, S. S., 2010 ने "Tribal Communities of Uttarakhand" में विभिन्न जनजातीय समूहों की सांस्कृतिक और पर्यावरणीय प्रथाओं का विश्लेषण किया है।
3. Mishra, M., 2018 का शोध–पत्र पारंपरिक पारिस्थितिकी ज्ञान और सतत विकास के बीच संबंधों को दर्शाता है।
4. UNDP Reports, 2020 में स्थानीय एवं स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों को सतत विकास लक्ष्यों से जोड़ने की दिशा में अनेक अनुशंसाएं दी गई हैं।
5. स्थानीय इतिहास एवं संस्कृति पर आधारित कई लघु शोध पत्रों जिसमें जल स्रोतों एवं वन पंचायत की भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

शोध पद्धति (Research Methodology)

यह शोध द्वितीयक स्रोतों पर आधारित वर्णनात्मक (Descriptive) और विश्लेषणात्मक (Analytical) अध्ययन है।

डेटा संकलन के स्रोत

- विभिन्न शोध–पत्र एवं रिपोर्ट्स
- पुस्तकों एवं पत्रिकाओं का अध्ययन
- समाचार पत्रों व ऑनलाईन सामग्री का विश्लेषण
- सरकारी वेबसाइटों एवं जनगणना आँकड़ों का संदर्भ

अध्ययन की सीमा – उत्तराखण्ड राज्य के उन सभी जिलों (पिथौरागढ़, चंपावत, उत्तरकाशी, देहरादून, ऊधमसिंह नगर आदि) को शामिल किया गया है जिनमें जनजातीय समुदाय ज्यादा से ज्यादा स्थायी रूप से निवास करते हैं।

डेटा विश्लेषण (DATA ANALYSIS)

जल प्रबंधन

उत्तराखण्ड में जल संरक्षण की एक समृद्ध पारंपरिक विरासत है, जो सदियों से जनजातीय समुदायों के जीवन का अभिन्न अंग रही है। इन समुदायों ने स्थानीय पारिस्थितिकी और जल उपलब्धता के अनुरूप विभिन्न प्रणालियाँ विकसित की हैं, जिनमें नौले, धारे, गूल, खाल, कुंड, सिमार, गजार और घराट प्रमुख हैं। ये प्रणालियाँ मुख्य रूप से वर्षा जल संचयन, भूजल पुनर्भरण और सतही जल के विवेकपूर्ण उपयोग पर केंद्रित थीं, जिससे दैनिक उपयोग के लिए विश्वसनीय जल आपूर्ति सुनिश्चित होती थी।

पारंपरिक रूप से, जनजातीय समुदायों में जल स्रोतों को केवल एक संसाधन के रूप में नहीं देखा जाता था, बल्कि उन्हें मंदिर के समान पवित्र माना जाता था। इन स्रोतों के पास देव मंदिर और देव प्रतिमाएँ स्थापित की जाती थीं, और उनके लिए कई अनुष्ठान किए जाते थे। यह पवित्रता का भाव लोगों को उन्हें साफ रखने और उनका सम्मान करने के लिए विवश करता था, जिससे जल संसाधनों का स्थायी प्रबंधन सुनिश्चित होता था। इन जल प्रणालियों के निर्माण में स्थानीय सामग्री और शिल्प का उपयोग होता था, जो उन्हें टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल बनाता था। इससे यह प्रतीत होता है कि पारंपरिक जल प्रबंधन केवल तकनीकी समाधान नहीं था, बल्कि एक सामाजिक–सांस्कृतिक और आध्यात्मिक प्रणाली थी। सामुदायिक स्वामित्व और धार्मिक पवित्रता ने जल स्रोतों के प्रति सम्मान और संरक्षण की भावना पैदा की, जिससे उनका स्थायी उपयोग सुनिश्चित हुआ। आधुनिक जल प्रबंधन नीतियों में अक्सर इस सामुदायिक और सांस्कृतिक पहलू की उपेक्षा की जाती रही है, जिससे परियोजनाओं की सफलता सीमित हो जाती है। जल संरक्षण के लिए केवल इंजीनियरिंग समाधानों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय, सामुदायिक भागीदारी और सांस्कृतिक मूल्यों को एकीकृत करना अधिक प्रभावी हो सकता है।

पारंपरिक जल प्रबंधन का सतत विकास पर प्रभाव

जनजातीय समुदायों द्वारा अपनाई गई पारंपरिक जल प्रबंधन प्रणालियाँ सतत विकास के कई पहलुओं में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। नौले और धारे जैसी प्रणालियाँ भूजल पुनर्भरण, सतही अपवाह को कम करने और मृदा संरक्षण में सहायक थीं, जिससे जल सुरक्षा और स्थिरता सुनिश्चित होती थी। ये प्रथाएँ स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र के साथ सामंजस्य स्थापित करती थीं और जैव विविधता के संरक्षण में योगदान करती थीं, क्योंकि जल स्रोत अक्सर पवित्र माने जाते थे और उनके आसपास का क्षेत्र भी संरक्षित रहता था।

हालांकि, आधुनिक विकास और जलवायु परिवर्तन के कारण इन पारंपरिक प्रणालियों और जल संसाधनों पर गंभीर दबाव पड़ा है। उत्तराखण्ड में लगभग 2.6 लाख प्राकृतिक जलस्रोत हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन और अन्य कारणों से लगभग 12 हजार जल स्रोत सूख गए हैं। राज्य में लगभग 90 प्रतिशत जलापूर्ति इन्हीं प्राकृतिक स्रोतों से होती है, जिससे जल संकट गहरा रहा है। यह स्थिति इस बात को रेखांकित करती है कि आधुनिक जल संकट का समाधान केवल नई, बड़ी परियोजनाओं में नहीं है, बल्कि पारंपरिक, समुदाय–आधारित जल प्रबंधन प्रणालियों के पुनरुत्थान और एकीकरण में भी निहित है। ये प्रणालियाँ न केवल पारिस्थितिक रूप से स्थायी हैं बल्कि सामाजिक–सांस्कृतिक रूप से भी गहरी जड़ें जमाए हुए हैं। उनका पुनरुत्थान न केवल जल सुरक्षा बढ़ाएगा बल्कि स्थानीय समुदायों को सशक्त करेगा और उनकी सांस्कृतिक विरासत को भी संरक्षित करने का करेगा। यह एक बॉटम–अप दृष्टिकोण की आवश्यकता पर बल

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parametres of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:7(3), July, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

देता है जो स्थानीय ज्ञान और सामुदायिक भागीदारी को प्राथमिकता देता है, बजाय केवल टॉप–डाउन इंजीनियरिंग समाधानों के। उत्तराखण्ड सरकार ने भी स्प्रिंग एंड रिवर रिजुविनेशन अथॉरिटी (सारा) का गठन कर पारंपरिक जल स्रोतों के संरक्षण और पुनर्जीवन के प्रयास किए हैं, जिसके तहत 6,500 से अधिक जल स्रोतों का संरक्षण किया गया है।

वन प्रबंधन

उत्तराखण्ड के जनजातीय समुदाय अपनी जीवन शैली और पारंपरिक ज्ञान के माध्यम से जल, जंगल और जमीन के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे पर्यावरण स्वच्छ और संतुलित बना रहे। इन समुदायों के पास औषधीय पौधों, वन्यजीवों के व्यवहार और सतत संसाधन उपयोग के विषय में पीढ़ियों पुरानी जानकारी होती है। यह ज्ञान उन्हें अपने स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र को समझने और उसके साथ सामंजस्य स्थापित करने में मदद करता है।

जनजातीय समुदाय प्रकृति को माता मानते हैं और जल, जंगल, जमीन, पहाड़, पर्वत तथा पशुओं की पूजा करते हैं, जो पर्यावरण संरक्षण की उनकी परंपरा का एक अभिन्न हिस्सा है। यह आध्यात्मिक जुड़ाव उन्हें संसाधनों का अत्यधिक दोहन करने से रोकता है और उन्हें प्राकृतिक रूप से संरक्षक बनाता है।

जनजातीय समुदायों का पारंपरिक ज्ञान केवल एक सांस्कृतिक विरासत नहीं है, बल्कि एक मूल्यवान वैज्ञानिक और पारिस्थितिक संसाधन है। इस ज्ञान का दस्तावेजीकरण और इसे आधुनिक संरक्षण रणनीतियों में एकीकृत करना जैव विविधता संरक्षण और सतत विकास के लिए महत्वपूर्ण है। यह ज्ञान–आधारित समाधानों के लिए एक सहयोगात्मक दृष्टिकोण का सुझाव देता है, जहाँ जनजातीय समुदायों को केवल लाभार्थी नहीं, बल्कि ज्ञान प्रदाता और भागीदार के रूप में देखा जाता है। यह ज्ञान के उपनिवेशीकरण से बचने और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के सम्मानजनक एकीकरण की आवश्यकता पर भी बल देता है, जैसा कि जैविक विविधता अधिनियम (BDA), 2002 और राष्ट्रीय जैव विविधता कार्य योजना (NBAP) जैसे कानूनी ढांचे भी पारंपरिक ज्ञान के दस्तावेजीकरण और संरक्षण को बढ़ावा देते हैं।

पवित्र उपवन और सामुदायिक वन प्रबंधन

जनजातीय समुदायों द्वारा वन संरक्षण की एक महत्वपूर्ण प्रथा पवित्र उपवनों (Sacred Groves) और सामुदायिक अभ्यारण्यों के माध्यम से वनों की रक्षा करना है। उत्तराखण्ड में राऊड़ की प्रथा एक ऐसा ही उदाहरण है, जहाँ जंगल के एक क्षेत्र को पवित्र मानकर देव स्थापना की जाती है और उस क्षेत्र में पेड़ों की कटाई व आग लगाना पूर्णतः प्रतिबंधित होता है। यह प्रथा न केवल वनों को भौतिक रूप से संरक्षित करती है, बल्कि एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व भी रखती है, जो समुदाय को सामूहिक रूप से वनों की रक्षा के लिए प्रेरित करती है।

कुछ जनजाति में एक पेड़ काटने पर दस पेड़ लगाने की परंपरा है, जो पर्यावरण के प्रति उनके गहरे आभार और संतुलन बनाए रखने की भावना को दर्शाती है। इसी तरह, बुक्सा जनजाति शक्ति के प्रतीक के रूप में पीपल के पेड़ की पूजा करती है, जो वृक्षों के प्रति उनके सम्मान और संरक्षण की भावना को दर्शाता है।

भारत सरकार द्वारा पारित वन अधिकार अधिनियम (FRA), 2006, वनवासियों को वन भूमि और प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार का मान्यता देता है, जिससे वनों का स्थायी प्रबंधन संभव होता है। इस अधिनियम के तहत ग्राम सभाएँ सामुदायिक वन संसाधनों के प्रबंधन, संरक्षण और विनियमन में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। संयुक्त वन प्रबंधन (JFM) कार्यक्रम भी स्थानीय समुदायों को वन संरक्षण और सतत संसाधन उपयोग में शामिल करते हैं। हालांकि, वन अधिकार अधिनियम (FRA) का उद्देश्य जनजातीय समुदायों को सशक्त बनाना और उनके पारंपरिक वन प्रबंधन प्रथाओं को कानूनी मान्यता देना है, लेकिन इसके कार्यान्वयन में अंतराल देखे गए हैं। उत्तराखंड में इस अधिनियम के खराब कार्यान्वयन ने वन गुज्जरों जैसे समुदायों को हाशिये पर धकेल दिया है। जनजातीय भूमियों का तेजी से अधिग्रहण और संसाधनों के क्षरण की समस्याएँ भी सामने आई हैं, जो वन अधिकार अधिनियम के प्रभावी कार्यान्वयन की कमी का प्रत्यक्ष परिणाम हो सकती हैं। केवल कानून बनाना पर्याप्त नहीं होता है, प्रभावी कार्यान्वयन, प्रशासनिक संवेदनशीलता और सामुदायिक भागीदारी सुनिश्चित करना भी महत्वपूर्ण होता है। यह एक नीतिगत अंतर को उजागर करता है जिसे संबोधित करने की आवश्यकता है ताकि जनजातीय अधिकारों को वास्तव में सुरक्षित किया जा सके और उनके सतत वन प्रबंधन योगदान को बढ़ावा दिया जा सके।

पारंपरिक वन प्रबंधन का सतत विकास पर प्रभाव

जनजातीय समुदायों की पारंपरिक वन प्रबंधन प्रथाएँ सतत विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। राऊड़ और वृक्षारोपण जैसी प्रथाएँ जैव विविधता के संरक्षण और पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। ये प्रथाएँ वनों को स्वस्थ रखती हैं, जिससे वन्यजीवों के आवासों का संरक्षण होता है और पारिस्थितिक संतुलन बना रहता है।

वन गुज्जर जैसे चरवाहा समुदाय अपनी आजीविका के लिए वनों पर निर्भर हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को सीधे महसूस करते हैं, जैसे बाढ़ और वनाग्नि। उनकी पारंपरिक पशुचारण पद्धतियाँ पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में सहायक हैं। उदाहरण के लिए, भेड़–बकरियों द्वारा सूखी घास चरने से जंगल में आग लगने का खतरा कम होता है, और उनके मल से पौधों के लिए प्राकृतिक खाद का इंतजाम होता है, जिससे मिट्टी की गुड़ाई भी होती है।

एक विरोधाभास यह भी है जहाँ एक ओर जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका प्रथाएँ पारिस्थितिक सेवाएं प्रदान करती हैं, वहीं दूसरी ओर, आधुनिक वन नीतियाँ और प्रशासनिक दृष्टिकोण इन प्रथाओं को बाधित कर रहे हैं। वन विभाग द्वारा पशुचारण के लिए शुल्क में लगातार वृद्धि की जा रही है, जिससे भेड़पालक हताश होकर जंगल छोड़ने पर मजबूर हो रहे हैं। यह दर्शाता है कि वन प्रबंधन में एक संकीर्ण, केवल संरक्षण–केंद्रित दृष्टिकोण दीर्घकालिक स्थिरता के लिए हानिकारक हो सकता है, क्योंकि यह उन पारंपरिक ज्ञान और प्रथाओं को कमजोर करता है जो वास्तव में पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य में योगदान करते हैं। यह नीतिगत सामंजस्य की आवश्यकता पर बल देता है जो पारंपरिक आजीविका और पारिस्थितिक संरक्षण को एकीकृत करता है। इसके अतिरिक्त, जंगल के रखरखाव और गार्ड के वेतन के लिए प्रत्येक परिवार द्वारा वार्षिक योगदान जैसे सामुदायिक प्रयास वन संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जो स्थानीय स्तर पर सशक्तिकरण और सहभागिता का एक मॉडल प्रस्तुत करता है।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parametres of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:7(3), July, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

भूमि प्रबंधन

उत्तराखण्ड के पहाड़ी क्षेत्रों में मृदा अपरदन को रोकने और भूमि का प्रभावी ढंग से उपयोग करने के लिए सीढ़ीदार खेत (टेरेस फार्मिंग) एक प्रभावी और पारंपरिक विधि है। यह विधि पहाड़ी ढलानों पर की जाती है, जिससे जल का बहाव नियंत्रित होता है और मृदा का कटाव कम होता है। इसके साथ ही, यह जल संचयन में भी मदद करती है, क्योंकि पानी सीढ़ियों पर रुकता है और धीरे–धीरे मिट्टी में रिसता है।

सीढ़ीदार खेती के अलावा, जनजातीय समुदाय मृदा संरक्षण के लिए अन्य महत्वपूर्ण उपाय भी अपनाते हैं। इनमें वृक्षारोपण, बाँध निर्माण और पशुचारण पर नियंत्रण शामिल हैं। मल्चिंग, यानी फसल अवशेषों या अन्य जैविक सामग्री से मिट्टी को ढकना, एक और महत्वपूर्ण प्रथा है जो मिट्टी की नमी को बनाए रखने और कटाव को कम करने में सहायक होता है। ये सभी प्रथाएँ मिलकर मिट्टी के स्वास्थ्य और उर्वरता को बनाए रखने में मदद करती हैं।

जनजातीय समुदायों द्वारा अपनाई गई पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ, विशेष रूप से सीढ़ीदार खेती और मृदा संरक्षण के उपाय, आधुनिक जलवायु परिवर्तन के प्रभावों जैसे अनियमित वर्षा और मृदा क्षरण के प्रति एक अंतर्निहित अनुकूलन क्षमता प्रदान करते हैं। ये पद्धतियाँ न केवल पर्यावरणीय रूप से स्थायी हैं बल्कि बदलती जलवायु परिस्थितियों में कृषि उत्पादकता को बनाए रखने के लिए भी महत्वपूर्ण होता हैं। इन पारंपरिक तकनीकों को बढ़ावा देना और उन्हें आधुनिक कृषि विज्ञान के साथ एकीकृत करना, जलवायु–स्मार्ट कृषि के लिए एक प्रभावी रणनीति हो सकती है, जिससे क्षेत्र की खाद्य सुरक्षा और किसानों की आजीविका सुरक्षित रह सके।

फसल चक्र और जैविक कृषि पद्धतियाँ

जनजातीय समुदाय पारंपरिक रूप से फसल चक्र (Crop Rotation) और मिश्रित खेती (Mixed Cropping) जैसी पद्धतियों का उपयोग करते थे, जो मिट्टी के स्वास्थ्य, उर्वरता और कीट नियंत्रण में सहायक होती थीं। फसल चक्र मिट्टी में पोषक तत्वों के संतुलन को बनाए रखने और कीटों व बीमारियों के प्रकोप को कम करने में मदद करता है। जैविक उर्वरकों का प्रयोग, जैसे हरित खाद और केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट), तथा कृषि अवशेषों का पुनर्चक्रण मृदा की जैविकता और जल धारण क्षमता को बढ़ाता है। ये प्रथाएँ रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता कम करती हैं, जिससे पर्यावरण प्रदूषण कम होता है और उत्तम गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों का उत्पादन होता है।

विशिष्ट जनजातीय संदर्भ

- थारू जनजातिः इनकी आय का मुख्य स्रोत कृषि और मछली पकड़ना है, साथ ही पशुपालन और आखेट भी हैं। वे अब खेती के वैज्ञानिक तरीकों को धीरे–धीरे अपना रहे हैं और सरकारी ऋण व सुविधाओं का लाभ उठा रहे हैं, जिससे सिंचाई और उन्नत बीज उपलब्ध हो रहे हैं।
- बोक्सा जनजातिः इनकी अर्थव्यवस्था पहले जंगलों पर आधारित थी, लेकिन वनों की कटाई के कारण अब कृषि और मजदूरी पर निर्भर है। वे झूम कृषि करते थे, लेकिन सीमित भूमि और कम उत्पादन के कारण अब रासायनिक खादों का भी प्रयोग करने लगे हैं।
- भोटिया जनजातिः इनकी आजीविका का मुख्य साधन पारंपरिक रूप से व्यापार और पशुपालन रहा है, जिसमें ऊन उद्योग शामिल है। वे पर्वतीय ढालों पर ग्रीष्म काल में सीढ़ीनुमा खेती करते हैं और बादी फसल प्रणाली का भी पालन करते हैं, जहाँ फलों के पेड़ मेड़ों पर लगाए जाते हैं ताकि मृदा का कटाव रोका जा सके।
- जौनसारी जनजातिः कृषि एवं पशुपालन इनका मुख्य व्यवसाय है। जौनसारी समुदाय में स्त्री–पुरुष दोनों ही कृषि कार्य में बराबर का श्रम करते हैं। महिलाएँ गृहस्थी, पशुपालन, जल, जंगल, जमीन, खेती, लकड़ी, पानी और चारा तक की व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।
- राजी जनजातिः कृषि योग्य भूमि की कमी, वर्षा पर निर्भरता और जलवायु परिवर्तन ने कृषि कार्य से उन्हें विमुख कर दिया है। सरकार उन्हें कृषि भूमि और संबंधित सहायता प्रदान करने का सुझाव दे रही है ताकि उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जा सके।

आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने से जनजातीय समुदायों की पारंपरिक, टिकाऊ कृषि प्रथाओं का क्षरण हो रहा है। आधुनिक पद्धतियाँ दीर्घकालिक मृदा स्वास्थ्य, जैव विविधता और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए हानिकारक हो सकती हैं। यह पारंपरिक ज्ञान के लुप्त होने और पर्यावरणीय जोखिमों में वृद्धि का कारण बन सकता है।

पारंपरिक भूमि प्रबंधन का सतत विकास पर प्रभाव

पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ जैसे फसल चक्र, मिश्रित खेती और जैविक खाद का उपयोग मृदा की उर्वरता और स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करता है, जिससे दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होती है। सीढ़ीदार खेती और वनरोपण मृदा अपरदन को कम करके पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा करते हैं और जल संरक्षण में भी सहायक होते हैं। ये प्रथाएँ रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता कम करती हैं, जिससे पर्यावरण प्रदूषण कम होता है और उत्तम गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों का उत्पादन होता है। इस प्रकार, पारंपरिक भूमि प्रबंधन पद्धतियाँ न केवल पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ हैं, बल्कि आर्थिक रूप से भी व्यवहार्य हो सकती हैं, खासकर जब उन्हें आधुनिक ज्ञान के साथ एकीकृत किया जाए। ये पद्धतियाँ स्थानीय जैव विविधता को बढ़ावा देती हैं और पारिस्थितिकी तंत्र की बहाली में योगदान करती हैं, जिससे आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ पर्यावरण सुनिश्चित हो सके।

सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टिकोण

- समुदाय आधारित निर्णय प्रणाली
- त्योहारों और परंपराओं के माध्यम से पर्यावरण चेतना
- महिलाओं की सहभागिता और ज्ञान संचयन

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parametres of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:7(3), July, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

विस्तृत विवेचन (Brief in Detail)

जनजातीय समुदायों द्वारा अपनाई गई पारंपरिक तकनीकों में वैज्ञानिक सोच स्पष्ट देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए नौला की सफाई एक सामाजिक अनुष्ठान के रूप में की जाती थी। इसी प्रकार, थारू समुदाय द्वारा वर्षा जल संचयन हेतु भूमि ढाल के अनुसार जल निकासी की प्रणाली विकसित की गई थी।

वन संरक्षण में वृक्षों को देवी–देवताओं से जोड़कर काटने पर सामाजिक प्रतिबंध लगाया गया है। भोटिया और जौनसारी समुदायों में स्थानीय औषधीय पौधों का संरक्षण पारिवारिक परंपरा के रूप में किया जाता है। जमीन की उर्वरता बनाए रखने के लिए जौनसार–बावर क्षेत्र में बहुफसली और फसल चक्र प्रणाली अपनाई जाती है।

उत्तराखण्ड की जनजातियों की पारंपरिक प्रथाएं और उनका सतत विकास पर प्रभाव

क्रम संख्या	जनजाति का नाम	पारंपरिक प्रथाएं (जल, जंगल, जमीन)	सतत विकास पर प्रभाव
1	भोटिया	ग्लेशियर आधारित जल स्रोतों का संरक्षण, सीमित पशुपालन व औषधीय पौधों का उपयोग	जल स्रोतों की शुद्धता बनी रहती है, जैव विविधता का संरक्षण
2	जौनसारी	सीढ़ीदार खेती की पद्धति, सामाजिक वन पंचायत व्यवस्था	मृदा क्षरण में कमी, सामुदायिक निर्णय से वन संरक्षण
3	थारू	वर्षा जल संचयन, लोक संस्कृति में वृक्ष पूजा	कृषि जल की उपलब्धता बनी रहती है, वन कटाई में कमी
4	बुक्सा	वनों से गैर–काष्ठ वनोपज का संतुलित दोहन, मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के उपाय	पारिस्थितिक संतुलन, सतत कृषि
5	राजी	शिकार परंपरा में सीमाएं, जलस्रोतों का स्थानीय नियंत्रण	वन्य जीव संरक्षण, जल उपयोग का न्यायसंगत बंटवारा

निष्कर्ष (Conclusion)

उत्तराखण्ड के जनजातीय समुदायों द्वारा जल, जंगल और जमीन के पारंपरिक प्रबंधन प्रथाएँ न केवल उनकी सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न अंग हैं, बल्कि सतत विकास के लिए एक महत्वपूर्ण मॉडल भी प्रस्तुत करती हैं। इन प्रथाओं में निहित गहन पारिस्थितिक ज्ञान, सामुदायिक स्वामित्व और धार्मिक पवित्रता ने सदियों से प्राकृतिक संसाधनों के स्थायी उपयोग और संरक्षण को बढ़ावा दिया है। पारंपरिक जल संचयन प्रणालियाँ, पवित्र उपवन, सामुदायिक वन प्रबंधन और टिकाऊ कृषि पद्धतियाँ जैसे कि सीढ़ीदार खेती और फसल चक्र, पर्यावरणीय लचीलेपन और जैव विविधता संरक्षण में अमूल्य योगदान देती हैं।

आधुनिक विकास, शहरीकरण, और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों ने इन पारंपरिक प्रणालियों और जनजातीय आजीविका पर गंभीर दबाव डाला है। भूमि अधिग्रहण, वन नीतियों में बदलाव, और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न प्राकृतिक आपदाओं ने इन समुदायों को विस्थापन, आजीविका के नुकसान और सांस्कृतिक क्षरण का सामना करने पर मजबूर किया है। इन चुनौतियों के बावजूद, जनजातीय समुदायों का विकसित पारंपरिक प्रबंधन प्रणालियां, ज्ञान और उनकी पर्यावरण–अनुकूल प्रथाएँ भविष्य के सतत विकास रणनीतियों के लिए महत्वपूर्ण समाधान प्रदान करती हैं। यह न केवल पर्यावरण संरक्षण बल्कि सतत विकास के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन प्रणालियों को वर्तमान विकास नीतियों में समाहित करने से ही सतत विकास लक्ष्यों की पूर्ति संभव हो सकेगी।

सतत विकास के लिए यह अनिवार्य है कि जनजातीय समुदायों के पारंपरिक ज्ञान का सम्मान किया जाए, उसे दस्तावेजित किया जाए और उसे आधुनिक संरक्षण और विकास प्रयासों में एकीकृत किया जाए। नीति निर्माताओं को वन अधिकार अधिनियम जैसे कानूनों के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करना चाहिए, जनजातीय समुदायों को निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदार बनाना चाहिए, और उनकी पारंपरिक आजीविका को सुरक्षित करने वाली नीतियों को बढ़ावा देना चाहिए। केवल एक समावेशी और सहयोगात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से ही उत्तराखण्ड के जनजातीय समुदायों की समृद्ध विरासत को संरक्षित किया जा सकता है और उन्हें प्राकृतिक संसाधनों के स्थायी प्रबंधन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए सशक्त बनाया जा सकता है, जिससे राज्य और उसके निवासियों के लिए एक अधिक टिकाऊ भविष्य सुनिश्चित हो सके।

संदर्भ सूची (Referencè)

1. Rawat, A. S., 2022, Forest Management in Kumaon Himalaya, Indus Publishing
2. Negi, S. S., 2010, Tribal Communities of Uttarakhand, Indus Publishing.
3. Mishra, M., 2018, Traditional Ecological Knowledge and Sustainable Development in the Himalayas, Journal of Environmental Studies
4. UNDP, 2020, Localizing SDGs through Indigenous Practices
5. Government of Uttarakhand 2021 Tribal Development Report.
6. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, 2023, भारत में जनजातीय अधिकारों की स्थिति रिपोर्ट।
7. पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार, वन पंचायत नीति दस्तावेज 2019
8. Census of India, 2011, District & wise Scheduled Tribes Data
9. उत्तराखण्ड जनजातीय समाज की संस्कृति एवं सामाजिक परम्परायें, https://anubooks.com/uploads/session_pdf/16629703514.pdf
10. उत्तराखंड की जनजातियों का अध्ययन, https://ijaer.org/admin/uploads/paper/file1/wDx4xn9m1bXI5q(19319)DJqzgGvVCD+zD0O9BWp6FaObD9DPGrU4AaSfEE5YLPmCuE5+O1.pdf
11. पर्यावरण संरक्षण में जनजाति समुदाय की भूमिका - Shailja UOU.pdf

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parametres of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:7(3), July, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

12. उत्तराखण्ड की जौनसारी जनजाति में महिलाओं की आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति, https://oldisrj.lbp.world/UploadedBData/355.pdf
13. अनुसूचित जनजाति जौनसारी बावर ;एक स्तरीकृत समाजशास्त्रीय अध्ययन– डॉ० गौतम बनर्जी, https://anubooks.com/uploads/session_pdf/166298078025.pdf
14. उत्तराखंड की राजी जनजाति का समाजवादी अध्ययन, https://ijaer.org/admin/uploads/paper/file1/RxGXLlwo5(19319)MkFMjQ9xxcPlOz6ITHbmYAVu5DJyOJIIY=1.pdf
15. संकट में है उत्तराखण्ड जलप्रबन्धन के पारम्परिक जलस्रोतों का अस्तित्व - https://www.himantar.com/the-existence-of-traditional-watershed-of-uttarakhand-water-management-is-in-crisis/
16. भारत की प्राचीन जल संचयन प्रणाली - https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/india-s-ancient-water-harvesting-system
17. उत्तराखण्ड हिमालय की भोटिया जनजाति - http://117.252.14.250:8080/jspui/bitstream/123456789/1956/1/18-
18. कुमाऊनी ;उत्तराखण्ड – राजी जनजाति की सभ्यता एव संस्कृति - http://hjssh.sharadpauri.org/papers/Volume%2012%202017%20HJSSH/16%20HJSSH%20%20Harish.pdf
19. उत्तराखंड के पर्वतीय समुदायों के वन अधिकारों की रखवाली करती वन पंचायतें - https://dialogue.earth/hi/2-hi/60017404/
20. भोटिया . विकिपीडिया, https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AD%E0%A5%8B%E0%A4%9F%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE
21. वन संरक्षण के लिए जनजातीय समुदाय की भूमिका - https://pwonlyias.com/hi/current-affairs/role-of-tribal-community-for-forest-conservation/
22. उत्तराखंड में तेजी से घटती राजी जनजाति को कृषि भूमि देने का सुझाव – https://m.uttarakhand.punjabkesari.in/uttrakhand/news/suggestion-to-give-agricultural-land-to-raji-tribe-1877098
23. जनजातीय युवाओं पर आधुनिकता का प्रभाव - https://old.rrjournals.com/wp-content/uploads/2019/09/218-223_RRIJM190408046.pdf
24. उत्तराखण्ड की संस्कृति – विकिपीडिया - https://hi.wikipedia.org/